कल्पवृक्ष

समुदाय व संरक्षण

अंक१, नं.१, जनवरी २००७

समुदाय आधारित जैवविविधता संरक्षण तथा आजीविका सुरक्षा

३.....*संपादकीय*

३.....*विधान व नीति*

संरक्षण क्षेत्र व सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र (कंज़रवेशन रिज़र्व व कम्यूनिटि रिज़र्व)

५.....*उदाहरणात्मक अध्ययन*

कोरज़ोक - लद्दाख में गृह निवास

दण्ड क्षेत्र से आदर्श गांव तक - महाराष्ट्र

तौउफेमा - नागालैंड

५.....*भारत के राज्यों से समाचार*

आंध्र प्रदेश

टिम्बकटू - अनभिज्ञता से बहुत दूर

शिकारियों के विरुद्ध उठी जनजातियां

गुजरात

युवा जीव वैज्ञानिक - हाक़ाभाई मक़वाना

कर्नाटक

पेलिकन परिवार

बांकापुरा मयूर संरक्षण क्षेत्र

मध्यप्रदेश

'लेस्सर फ्लोरिकन' पक्षी की सुरक्षा के लिए आर्थिक सहयोग

मणिपुर

स्थानीय समुदाय द्वारा 'स्लो लोरिस' संरक्षण के लिए एक परियोजना

उड़ीसा

औषधीय पौधों के बदले आयुर्वेदिक चिकित्सा की व्यवस्था

राजस्थान

उदपूरिया गांव का तालाब

बिश्नोई समुदाय का पुनः प्रयास

पश्चिम बंगाल

कलिकापुर के युवा परिस्थितिकी आलेखक

१२.....*राष्ट्रीय समाचार*

बाघ प्राधिकरण की स्थानीय समुदायों पर निर्भरता

१२.....*अंतर्राष्ट्रीय समाचार और टिप्पणी*

सामुदायिक संरक्षण के नायकों को श्रद्धांजलि

१३.....*आप भी शामिल हों*

उड़ीसा में सामुदायिक संरक्षण पर सम्मेलन/कार्यशाला

१३.....*नए प्रकाशन*

'मैनेजिंग प्रोटैकटेड एरियाज़ - ए ग्लोबल गाईड'

'पार्टिसिपेटरी कंज़रवेशन - पैराडाईम शिफट्स इन इनटरनेशनल पॉलिसी - अ कम्पाईलेशन आफ आउटपुट्स फ्रॉम ग्लोबल इवेंटस रिलेटिड टू पार्टिसिपेटरी कंज़रवेशन'

'लिंकिग कंज़रवेशन विद लाईवलिहुड - लेसंस फ्रॉम मैनेजमेंट आफ गीर प्रोटैकटेड एरिया इन वेस्टर्न इंडिया'

'अ सिंपल गाईड टू इंटलैक्चुअल प्रौपर्टी राइट्स, बायोडायवर्सिटी एण्ड ट्रैडीशनल नॉलेज'

अंडरस्टैन्डिंग द बायोलौजिकल डायवर्सिटी एक्ट २००२- ए डॉसियर'

'प्रोसेस डाक्यूमेंटेशन आफ द नैशनल बायोडायवर्सिटी स्ट्रैटिजी एक्शन प्लैनः इंडिया'

'कम्यूनिटि कन्र्ज़वड एरियाज़ इन इंडिया' - एक प्रचार पत्र

संपादकीय

''समुदाय व संरक्षण'' के पहले अंक में आपका स्वागत है। वर्ष में तीन बार प्रकाशित होने वाला यह समाचार पत्र स्थानीय समुदायों के द्वारा संरक्षण व उस से जुड़े आजीविका के मुद्दों से संबंधित है। विश्व के कई महत्वपूर्ण प्राकृतिक स्थल जो जैवविविधता से भरपूर हैं, भारत में स्थित हैं। पीढ़ी दर पीढ़ी, हज़ारों मानव समुदाय इस प्राकृतिक जैवविविधता के बीच रहकर इस पर आधारित आजीविकाओं का विकास करते रहे हैं। और इन सभी व्यवस्थाओं का अपने आस-पास के प्राकृतिक संसाधनों के साथ परस्पर लेन-देन का रिश्ता रहा है।

पिछले दो शतकों से इन पारस्परिक संबंधों व संतुलन को विभिन्न कारणों से गंभीर आघात पहुंचा है। इनमें से प्रमुख हैं - ऐसे सामाजिक व राजनैतिक निर्देश जो विकास को प्राथमिकता देते हुए प्राकृतिक संसाधनों को निचोड़ रहे हैं। और यह सभी निर्देश ऐसे विकास की परिकल्पना करते हैं जो स्थानीय समुदायों की पूरी तरह अवहेलना करता है। वे स्थानीय समुदाय जो अपनी रोज़मर्रा की भौतिक, सामाजिक, भावनात्मक व सदाचारी ज़रूरतों और जीवनयापन के लिए इन संसाधनों के साथ संबंध बनाए हुए हैं।

उपरोक्त समस्याओं के बावजूद अनेक स्थानिक समुदाय अपने आस-पास के संसाधनों, वन्यजीवों व प्राकृतिक स्थलों के संरक्षण में जुटे हूए हैं। इन समुदायों के ये प्रयास अक्सर उनकी परंपरा का एक अटूट हिस्सा हैं या फिर से उन परंपराओं को जीवंत करने का प्रयास हैं। अनेक उदाहरणों में समुदायों ने अपने परिस्थितियों पर आधारित नई व्यवस्थाएं बनाने की कोशिश भी की है। हमारा अनुभव रहा है कि ऐसे प्रयास ज़्यादातर लोग अपने आप शुरु करते हैं या किसी गैर सरकारी संस्था या सरकारी कर्मचारियों की मदद से शुरु करते हैं। जैवविविधता व वन्यजीवन संरक्षण की सरकारी रणनीतियां, कानून व नीतियां इन प्रयासों से काफी कुछ सीख सकती हैं।

देश में प्राकृतिक संसाधनों व वन्य जीवों के अनिश्चित भविष्य को देखते हुए, यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि स्थानिक समुदायों के इन प्रयासों को प्रोत्साहित किया जाए। हमारा अनुभव रहा है कि सरकारी संस्थाएं हों, राजनैतिक चर्चा हो या सामाजिक विषयों व वन्य जीव संरक्षण के विषय में काम करने वाले लोग हों - समाज में जन समुदायों द्वारा किए जा रहे संरक्षण के प्रयासों को न तो पहचाना गया है न ही महत्व दिया गया है। इन प्रयासों को सामाजिक, सरकारी व राजनैतिक पहचान न मिल पाने का एक महत्वपूर्ण कारण है, इनके विषय में अधिक जानकारी न होना। अगर थोड़ी जानकारी है भी तो वह सही समय पर सही जगह नहीं पहुच पाती है। यह समाचार पत्र इस जानकारी को कुछ हद तक उपलब्ध कराने की तरफ हमारा एक छोटा सा प्रयास है।

विधान व नीति

संरक्षण क्षेत्र व सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र (कंज़रवेशन रिज़र्व व कम्यूनिटि रिज़र्व)

भारत के प्राकृतिक संसाधनों, वन्यजीवन व वनों के संरक्षण का इतिहास सुखद नहीं रहा है। इसका मुख्य कारण राज्य तथा स्थानीय समुदायों के बीच का मतभेद है। सरकार द्वारा किए गए संरक्षण प्रयास, अंग्रेज़ सरकार के प्रयासों पर ही आधारित हैं - जहाँ संरक्षण कानून उन स्थानीय समुदायों की सलाह लिए बिना ही तय कर दिए गए, जिनका अपने पर्यावरण व उसके प्रबंधन से गहरा संबंध था (और अभी भी है)। इसके अतिरिक्त, ऐसे सभी कानून ऊपर से लागू किए जाते हैं, जहाँ पूरा नियंत्रण सरकारी अधिकारियों तथा संस्थानों के हाथों में है। इस कारण स्थानीय समुदायों के पास केवल नाम-मात्र के ही अधिकार बाकी रह गए हैं। पीढ़ी दर पीढ़ी, इस बढ़ते अलगाव के कारण स्थानीय समुदायों के साथ-साथ, देश के वनों ओर वन्यजीवों को भी गहरा धक्का लगा है। वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, १९७२ इन्हीं अंग्रज़ी प्रभावों से ग्रस्त है और जहाँ यह एक अत्यंत उपयोगी भूमिका निभा सकता था, वहीं आज अक्सर लोगों के साथ तकरार के कारण उतना असर नहीं कर पाता है।

लेकिन कानूनी सहायता के अभाव, तथा कई अंदरूनी व बाहरी खतरे होने के बावजूद भी देश में हज़ारों समुदायों द्वारा आरक्षित क्षेत्र (CCA's) क्रियाशील हैं। समुदायों द्वारा आरक्षित क्षेत्रों को निम्नलिखित परिभाषा दी जा सकती है - ''ऐसे प्राकृतिक क्षेत्र जहां स्थानीय लोगों का अस्तित्व हो और जो परंपरागत कानूनों व अन्य प्रभावी उपायों से स्थानीय समुदायों द्वारा स्वैच्छिक रूप से संरक्षित हों और जो महत्वपूर्ण जैवविविधता, पारिस्थितिक सेवाएँ तथा सांस्कृतिक मूल्यों के लिए उपयोगी हों और जहां प्रबंधन, नीतियां बनाने तथा निर्णय लेने की ज़िम्मेदारी स्थानीय समुदायों पर ही हों।''

वन्यजीव (संरक्षण) संशोधन अधिनियम, २००२ के अंतर्गत दो नए प्रावधान दिए गए हैं। ये हैं 'संरक्षित क्षेत्र तथा सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र'। इन प्रावधानों में ब्रिटिश काल के बाद संरक्षण के इतिहास में पहली बार वनों तथा वन्यजीवों के संरक्षण में स्थानीय समुदायों की सहभागिता को महत्व दिया गया है। इससे आशा की एक नई किरण मिली और वर्ष २००४ में बॉम्बे नैचुरल हिस्ट्री सोसाइटी, वाईल्डलाइफ ट्रस्ट ऑफ इंडिया तथा कल्पवृक्ष ने इस नए कानून के प्रभावों को समझने के लिए एक कार्यशाला का आयोजन किया। इसमें समुदायों के प्रतिनिधि, वनाधिकारियों, वकीलों, संरक्षण कार्यकत्ताओं तथा गैर सरकारी संगठनों ने भाग लिया। भागीदारों द्वारा उठाए गए मुख्य सवाल थे:-

अ) क्या ,यह दो नई श्रेणियां, वर्तमान में विद्यमान सामुदायिक संरक्षित क्षेत्रों को आवश्यक कानूनी सहायता उपलब्ध करा पाएँगी? एवं

ब) क्या स्थानीय समुदाय, अपने संरक्षण प्रयासों को सशक्त करने के लिए इन कानूनी प्रावधानों को वाकई इस्तेमाल करेंगे?

वन्यजीव (संरक्षण) संशोधन अधिनियम २००२, द्वारा परिभाषित संरक्षण क्षेत्र

धारा ३६.अ संरक्षण क्षेत्र

''राज्य सरकार किसी भी सरकारी क्षेत्र को, खासकर जो राष्ट्रीय उद्यानों व अभ्यारण्यों के पास के क्षेत्र हैं, तथा जो दो संरक्षित क्षेत्रों को आपस में जोड़ते हैं, स्थानीय समुदायों से परामर्श के बाद प्राकृतिक, समुद्री, जीवों व पौधें, तथा उनके प्रवासों के संरक्षण हेतु, संरक्षण क्षेत्र घोषित कर सकती है।''

धारा ३६. ब

''राज्य सरकार को संरक्षण क्षेत्र के संरक्षण, प्रबंधन एवं व्यवस्था के विषय में प्रमुख वन्यजीव प्रतिपालक (चीफ वाइल्ड लाइफ वार्डन) को सलाह देने के लिए, एक संरक्षित क्षेत्र प्रबंधन समिति का गठन करना होगा।''

संरक्षित क्षेत्र सिर्फ सरकारी ज़मीन पर ही घोषित किए जा सकते हैं। अधिकतर क्षेत्र जहां समुदायों द्वारा संरक्षण के प्रयास किए जा रहे हैं, वह सरकारी भूमि पर ही है। इसलिए इन समुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्रों को इस श्रेणी में शामिल किए जाने की सबसे अधिक संभावना है। परंतु एक बार इन 'समुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्रों' के 'संरक्षित क्षेत्र' बन जाने पर, नियंत्रण की बागडोर इन समुदायों के हाथ से निकल के मुख्य वन्य जीव प्रतिपालक (चीफ वाइल्ड लाइफ वार्डन) के हाथ में चली जाएगी। और समुदायों की भूमिका सिर्फ मुख्य वन्यजीव प्रतिपालक को सलाह देने तक ही सीमित रह जाएगी। यह स्पष्ट नहीं है कि वे समुदाय, जो आज तक स्वाभाविक तौर से वन तथा संसाधनों का प्रबंधन करते आए हैं, वे ऐसी प्रक्रिया को सहमति क्यों देगें जहां वे पूरी तरह से इन संसाधनों पर अपना अधिकार खो सकते हैं। अतः यह तो साफ है कि इस श्रेणी में कुछ ही समुदाय अपनी इच्छा से भाग लेंगे। यह प्रावधान उन इलाकों में अधिक प्रभावी रहेगा जहां पहले से स्थानीय समुदायों द्वारा संरक्षण के प्रयास न हों।

वन्यजीव (संरक्षण) संशोधन अधिनियम २००२, द्वारा परिभाषित सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र

धारा ३६.सी सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र

''राज्य सरकार, ऐसे किसी भी क्षेत्र को सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र घोषित कर सकती है जो - १. निजी या सामुदायिक भूमि है २.जो राष्ट्रीय उद्यान, अभ्यारण्य अथवा संरक्षित क्षेत्र के अंदर न हो ३. और जहां किसी व्यक्ति अथवा समुदाय ने वन्यजीवन, उनके आवास तथा परंपरागत व सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण की स्वैच्छिक ज़िम्मेदारी ली हो।''

धारा ३६ डी -

''राज्य सरकार को एक सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र प्रबंधन समिति का गठन करना होगा, जो - इस क्षेत्र के संरक्षण, प्रबंधन अथवा देखभाल की ज़िम्मेदारी संभालेगी। समिति में ग्राम पंचायत द्वारा पांच प्रतिनिधि नियुक्त किए जाएंगे। जहां ग्राम पंचायतें नहीं हैं, वहां ग्राम सभा के सदस्य इन प्रतिनिधियों को नियुक्त करेंगे। एक प्रतिनिधि राज्य के वन अथवा वन्यजीव विभाग का होगा, जिसके कार्य क्षेत्र में वह समुदायिक आरक्षित क्षेत्र उपस्थित है''

सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र केवल निजी, संस्थान की अथवा सामुदायिक भूमि पर ही घोषित किए जा सकते हैं। जैसे कि पहले कहा जा चुका है कि अधिकतर क्षेत्र जो समुदयों द्वारा संरक्षित हैं, सरकारी भूमि पर ही स्थित हैं। अतः वे इस श्रेणी का लाभ नहीं ले पाएंगे। उत्तर पूर्व भारत तथा पश्चिम घाटी, जहां वन तथा सार्वजनिक भूमि अभी भी निजी या सामुदायिक नियंत्रण में है - केवल वहीं पर इस श्रेणी को लागू किया जा सकता है।

कार्यशाला में भाग लेने वालों ने यह समझने की भी कोशिश की कि किसी क्षेत्र के प्रबंधन, संसाधन व भूमि उपयोग पर पहले से चली आ रही सामुदायिक प्रक्रियाओं पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा। इस अधिनियम की घोषणा के बाद समुदाय व व्यक्ति, क्षेत्र के संरक्षण एवं प्रबंधन के लिए अपने अधिकार खो देंगे। यह अधिनियम एक सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र प्रबंधन समिति के गठन की बात करता है, जिसमें एक वनाधिकारी के साथ, पंचायत द्वारा चयनित सदस्य होगें। उदाहरण के लिए, उत्तरपूर्व भारत में, परंपरागत ग्राम समितियाँ अपने आप 'खोनोमा ट्रैगोपान अभ्यारण्य' जैसे क्षेत्रों का संरक्षण कर रही हैं। यह ग्राम समितियाँ फिलहाल पंचायत से अलग रहकर सिर्फ संरक्षण के मुद्दों पर काम करती हैं। लेकिन एक बार सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र घोषित हो जाने के बाद इन्हें पंचायत आधारित समिति द्वारा कार्य करना होगा, जिसमें कई समस्याएं आ सकती हैं।

इस समिति में अनिवार्य रूप से वनाधिकारी की उपस्थिति से समुदायों को आपत्ति हो सकती है खासकर ऐसी स्थिति में जहां उनका वनाधिकारियों के साथ अविश्वास का इतिहास रहा है।

इसके अतिरिक्त, एक बार सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र घोषित हो जाने

के बाद, राज्य सरकार की अनुमति के बिना, कोई भी व्यक्ति या सामुदायिक संस्थान अपनी भूमि के उपयोग में बदलाव नहीं कर सकेगा। ऐसे में कोई भी समुदाय इस प्रकार की शक्तिविहीन प्रक्रिया का साथ क्यों देगा। अतः इस श्रेणी को समर्थन मिल पाना बहुत मुश्किल है, क्योंकि इसके लाभ अस्पष्ट होने के साथ-साथ यह समुदायों तथा व्यक्तियों के लिए हानिकारक भी हो सकता है।

इन्हीं सब मुद्दों के आधार पर कार्यशाला में यह आम सहमति बनी, कि आज तक चले आ रहे सामुदायिक संरक्षण प्रयासों को इन श्रेणियों से कुछ खास सहयोग नहीं मिल पाएगा व इससे इन इलाकों में और विवाद पैदा हो सकते हैं। भागीदारों ने इस अधिनियम में तुरंत संशोधन करने की राय दी जिससे संरक्षण के लिए बनाई गई यह दोनों श्रेणियां असल में कारगर हो सकें। इन संशोधनों के अतिरिक्त, इनको लागू करने के लिए मार्गदर्शन की भी आवयश्कता होगी, जिसमें इन क्षेत्रों की घोषणा व प्रबंधन, नियंत्रण व संतुलन की प्रक्रियाएं स्पष्ट रूप से लिखी हों। साथ ही संबंधित व्यक्तियों, समुदायों तथा सरकारी एजेंसियों द्वारा समझौते का सम्मान न किए जाने की दशा में क्या कदम उठाए जाने चाहिएं, उनको भी स्पष्ट किया जाए।

यह सभी सुझाव संबंधित अधिकारियों तक पहुंचा दिए गए थे। पर अभी तक इस विषय में कोई सरकारी उत्तर प्राप्त नहीं हुआ है। कल्पवृक्ष ने अन्य कुछ भागीदारों के साथ मार्गदर्शिका का मसौदा भी तैयार किया था जिसे पर्यावरण व वन मंत्रालय को भेजा गया था। इसे मंत्रालय ने विभिन्न राज्यों को उनकी टिप्पणी के लिए आगे भेजा। इस पर भी अभी तक कोई जवाब नहीं मिला है। वर्तमान समय में मंत्रालय इन श्रेणियों को लागू करने के लिए निर्देशों का प्रारूप बनाने की प्रक्रिया में है।

स्रोत - 'बॉम्बे नैचुरल हिस्ट्री सोसाइटी', मुंबई में ३ व ४ फरवरी, २००४ को सामुदायिक क्षेत्र, संरक्षित क्षेत्र तथा अन्य कानूनी प्राविधानों पर कार्यशाला - चर्चाओं व संस्तुतियों का संक्षिप्त विवरण

नेमा पाठक, आशीष कोठारी तथा शांता भूषण ' इनवॉलविंग कम्यूनिटीज़ इन कनज़रवेशन - ए लॉस्ट औपोरच्यूनिटी'; www.hindustantimes.com. ३०/०३/२००४

नीमा पाठक, तसनीम बालानीसोरवाला, आशीष कोठारी व ब्रायन बुशली 'पीपल इन कनज़रवेशन - कम्यूनिटी कनज़र्वड एरियाज़ इन इंडिया'

संपर्क - कल्पवृक्ष, पुणे, संपादकीय पते पर

कोरज़ोक - लद्दाख में गृह निवास

चंगपा, एक परंपरागत भ्रमणशील/खानाबदोश जनजाति है, जो अपने पशुओं के साथ पूर्वी लद्दाख तथा तिब्बत के कुछ भागों में फैले उच्च चंगथांग पठार के क्षेत्र में घूमते हैं। परंतु पिछले कुछ समय से कुछ चंगपा सदस्यों ने खानाबदोशी छोड़ कर स्थायी जीवन अपना लिया है। लद्दाख में स्थित त्सो मोरिरी झील के किनारे बसा कोरज़ोक मूलतः एक चंगपा गांव है। एक समय में इन लोगों की अर्थव्यवस्था इनके पशुओं की संख्या के आधार पर निर्धारित होती थी और अपने पशुओं के लिए चारागहों की उपलब्धता ही इनके लिए बहुमूल्य सम्पत्ति थी।

त्सो मोरिरी, पक्षियों की कई महत्वपूर्ण प्रजातियों, जैसे 'ब्लैक नैक्ड क्रेन' (*Grus nigricollis*) तथा 'बार हेडेड गीज़' (*Anser indicus*) आदि का घर है। यहां कई अन्य प्रवासी जल पक्षी भी आकर रुकते हैं। समुद्रतल से ४६६५ मीटर की ऊंचाई पर स्थित, त्सो मोरिरी झील विश्व की सबसे ऊंची झीलों में से एक है। और इसके साथ-साथ, भारतीय चंगथांग क्षेत्र में स्थित सबसे बड़ी खारे पानी वाली झीलों में से भी एक है। यह एक 'रामसर क्षेत्र' (एक अंतर्राष्टीय समझौता जिसके अंतर्गत प्राकृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण जलाशयों को एक विशेष स्थान प्रदान किया जाता है) है, तथा वन्यजीव संरक्षण अधिनियम, १६७२ के अंतर्गत घोषित 'चंगथांग शीतल मरूस्थल वन्यजीव अभ्यारण्य' का एक भाग है। जम्मू तथा कश्मीर वन्यजीव संरक्षण अधिनियम, १६७८ के अंतर्गत यह एक संरक्षित जलाशय क्षेत्र (वैटलैंड कन्जरवेशन रिज़र्व) भी है।

इस झील की प्राकृतिक सुंदरता तथा विशिष्ट वन्यजीवन के कारण यहां बहुत से पर्यटक आकर्षित होते हैं। पर्यटकों को लाने वाले गधे व ख़च्चर उन्हीं चारागाहों पर चरते हैं जो वैसे भी चंगपाओं के जानवरों के लिए कम पड़ते थे। इसके अलावा कुछ अन्य कारणों से भी चंगपाओं को अपनी परंपरागत आजीविकाओं को छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा। वे आजीविका के वैकल्पिक स्रोतों की खोज में थे। तभी यहां की महिलाओं को लद्दाख की रूमबाक और मारखा घाटी में रहने वाले अपने संबंधियों से पर्यटकों को अपने घरों में एक अथवा दो कमरे किराये पर देकर, अपनी आजीविका चलाने के विषय में पता चला और अब वे भी इस ज़रिए से कमाई करने के लिए इच्छुक थे।

वर्ष १६६६, से वर्ल्ड वाईड फंड-भारत (डब्लू.डब्लू.एफ.-इंडिया) त्सो मोरिरी तथा लद्दाख में ऊंचाइ पर स्थित अन्य जलीय क्षेत्रों (वैटलैंड) के संरक्षण का काम कर रहा है। यहां पाए जाने वाली दुर्लभ प्रजातियों के संरक्षण के लिए डब्लू.डब्लू.एफ.-इंडिया द्वारा किए जा रहे प्रयासों में कई बाधाएं आ रही थीं। यहां आने वाले पर्यटकों की बढ़ती संख्या के कारण, यहां के पारिस्थितिकीय संतुलन पर बुरा असर पड़ रहा था। डब्लू.डब्लू.एफ.-इंडिया को यह अहसास हुआ कि इस महत्वपूर्ण क्षेत्र के संरक्षण के लिए उन्हें स्थानीय व्यक्तियों की सहायता लेनी होगी। वर्ष २००२ में, क्षेत्र के संरक्षण प्रयास स्थानीय लोगों को सौंपने के लिए 'त्सो मोरिरी कंज़रवेशन ट्रस्ट' बनाया गया। वहां रहने वाले आदरणीय व बुजुर्ग व्यक्तियों को इस ट्रस्ट का मुखिया बनाया गया। डब्लू.डब्लू.एफ. -इंडिया ने इस ट्रस्ट को बनाने में महत्वपूर्ण सहयोग दिया। जहां

डब्लू.डब्लू.एफ.-इंडिया को इस क्षेत्र के संरक्षण के लिए स्थानीय व्यक्तियों की सहायता की आवश्यकता थी, वहीं लोगों को भी पर्यटन उद्योग में अपना हिस्सा बढ़ाने के लिए डब्लू.डब्लू.एफ.-इंडिया की सहायता की आवश्यकता थी। दोनों के बीच विचार विमर्श से 'त्सो मोरिरी गृह निवास' की पहल हुई। इसके लिए जहां स्थानीय समुदायों ने शुरुआती कदम उठाए, वहीं डब्लू.डब्लू.एफ.-इंडिया ने इसके लिए रणनीति व प्रयोजन के अपने अनुभव से हाथ बंटाया। जिससे दोनों के उद्देश्य पूरे हो सकें। त्सो मोरिरी आने वाले पर्यटकों से उनकी अपेक्षाओं को जानने के लिए कुछ सवालों की सूचि बनाई गई। इस अध्ययन से पता चला कि अधिकांश पर्यटक यहां सांस्कृतिक तथा प्राकृतिक अनुभव की चाह में आते हैं। सभी ने गृह निवासों में रहने की व्यवस्था का स्वागत किया, क्योंकि इससे उन्हें यहां की जीवन शैली का अनुभव भी प्राप्त होगा और स्थानीय व्यक्तियों को भी अपनी आजीविका के लिए सहायता मिलेगी। इस जानकारी के आधार पर, घर की स्थिति, जगह तथा मूल सुविधाओं की उपलब्धता को देखते हुए दस गृह निवासों को चुना गया।

वर्ष २००६ में पर्यटकों के आने से पहले डब्लू.डब्लू.एफ.-इंडिया इन गृह निवास मालिकों के लिए प्रशिक्षण शुरू किया। इसके लिए उन लद्दाखी साथियों ने साथ दिया जिन्हें 'हेमिस राष्ट्रीय उद्यान' में गृह निवास चलाने का अनुभव था। स्वास्थ्य, कूड़े को अलग करना, व्यापारिक लेन-देन तथा आर्थिक प्रबंधन में प्रशिक्षण दिया गया। पर्यटकों के मार्गदर्शन के लिए निर्देश पत्र बनाने में स्थानीय लोगों को प्रोत्साहन दिया गया। कार्यक्रम के अंतर्गत पर्यावरण संरक्षण तथा स्थानीय समुदायों की आजीविका के सबंध पर ज़ोर दिया गया। ट्रेनिंग के लिए पैसे की व्यवस्था शुरु में डब्लू.डब्लू.एफ.-इंडिया द्वारा की गई तथा उसके बाद ट्रस्ट तथा गृह निवास मालिकों ने मिलकर खर्च उठाया। व्यापार के समेकित लाभ वितरण को सुनिश्चित करने के लिए नियम बनाए गए जिससे कि सबको समतुल्य लाभ मिले और पैसा सीधे गृह निवास मालिकों के हाथ में आए।

ट्रस्ट चलाने वालों को पता है कि प्रबंधन के लिए कड़े नियमों की आवश्यकता है, जिनसे इस प्रक्रिया से पैदा होने वाली कठिनाईयों को रोका जा सकता है। लोगों द्वारा तैयार की गई मार्गदर्शिकाओं को प्रत्येक गृह निवास पर चिपकाया गया है जिससे प्रत्येक पर्यटक को पर्यावरण संरक्षण के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी का अहसास रहे। गृह निवास मालिक, जिनके लिए आसपास के प्राकृतिक संसाधन अब महत्वपूर्ण हैं, वे उसकी तरफ और अधिक ज़िम्मेदार भी हो गए हैं।

कई प्रतिकूल स्थितियों के होने की वजह से कोरज़ोक गांव को अपने इस प्रयास में सहायता मिली है। जैसे कि - इच्छुक तथा सक्षम स्थानीय लोग, वहीं के आदरणीय व्यक्तियों द्वारा चलाई जा रही स्थानीय ट्रस्ट, सभी साथियों के बीच सद्भावना, डब्लू.डब्लू.एफ.-इंडिया द्वारा सहायता, व पर्यटकों व अपने लोगों के मार्गदर्शन के लिए खुद ही बनाए गए सक्षम व प्रभावी नियम।

इस कदम से जो विभिन्न उद्देश्य पूरे हुए हैं, उन्हें एक पर्यटक द्वारा लिखे शब्दों में अच्छी तरह से बताया जा सकता है - "आपके स्वागत व सत्कार तथा अच्छे भोजन के लिए धन्यवाद। हम आशा करते हैं कि यह गृह निवास की उत्तम व्यवस्था स्थानीय व्यक्तियों की मदद करने के साथ-साथ त्सो मोरिरी की विलक्षण जैवविविधता के संरक्षण में भी सफल होगी। आप बहुत ही खास जगह पर रहते हैं!"

द्वारा - सीमा भट्ट, डब्लू.डब्लू.एफ.-इंडिया के योगदान के साथ

संपर्क - सीमा भट्ट, बी-६४, दूसरी मंज़िल, डिफेंस कालोनी, नई दिल्ली-११००२४ फोन - ०११-२४३३०१३० ई-मेल - seemabhatt@vsnl.com

दण्ड क्षेत्र से आदर्श गांव तक - महाराष्ट्र

हिवरे बाज़ार, महाराष्ट्र के अहमदनगर शहर से १७ किलोमीटर दूर, १२५० जनसंख्या वाला एक छोटा सा गांव है। गांव में घास उगने वाले क्षेत्र व कंटीले बबूल तथा नीम (*Azadirachta indica*) के पेड़ पाए जाते हैं। यहां पाए जाने वाले बड़े स्तनधारी जानवरों में 'ब्लैक बक' (*Antelope cervicapra*) तथा 'ब्लैक नेप्ड हेयर' (खरगोश) (*Lepus nigricollis*) मुख्य हैं। पर्यावरण व वन मंत्रालय ने सितम्बर २००६ में अपनी वेबसाईट पर यहां की बढ़ती वन्यजीव संख्या के विषय में लिखा है। गांव में घरेलु पशओं की कुल संख्या लगभग २००० है। वर्तमान में दूध बेचना, खेती व मुर्गीपालन इस समृद्ध गांव के मुख्य आय के स्रोत हैं।

यह प्रेरणादायक कहानी उस गांव की है, जो पहले अपने आकाल, अत्यधिक अपराध दर, तथा शराबखोरी के लिए जाना जाता था। परंतु आज वह ऐसा उदाहरण बन गया है जहां लोगों ने मिलकर अपने प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण व आजीविकाओं के साधन के माध्यम से अपने लिए एक बेहतर जीवन शैली प्राप्त की है।

१९७० से इस सूखे क्षेत्र में दिन-ब-दिन बढ़ती पानी की कमी तथा मिट्टी की उपजाऊ शक्ति कम होनें के संकेत मिलने लगे थे। वनों के कट जाने के कारण, जो थोड़ी बहुत बारिश होती थी उसका पानी भी ऊपरी सतह से ही बह जाता था। पानी तथा उपजाऊ भूमि की कमी के कारण गांव में गरीबी, लोगों का गांव छोड़कर जाना, शराबखोरी, और अन्य अपराध बढ़ने लगे। गांव की दशा बदतर हो गई तथा वर्ष १९८० से १९९१ तक वह इसी हालत में रहा।

वर्ष १९९२ में, गांव के युवकों ने श्री.पोपट राव पवार को गांव वापस लौटने को कहा। श्री.पोपट राव पवार प्रतियोगात्मक खेलों के प्रति अपनी रूचि के कारण शहर चले गए थे। पोपट राव वापस लौटे तथा गांव के सरंपच चुन लिए गए। पवार एक प्रेरणादायक नेता सिद्ध हुए। उनकी सामाजिक ज़िम्मेदारी की सशक्त भावना से गांव में एक नई आशा आई। उन्होंने वहां यशवंत कृषि ग्राम पनलोट संस्था का गठन किया। इस दल ने गांववालों के साथ मिलकर वृक्षारोपण के साथ-साथ, पानी के स्रोतों को पुर्नजीवित करने के लिए और पानी के बहाव को रोकने तथा जमा करने के लिए टंकियां बनाईं। पवार ने विभिन्न सरकारी योजनाओं और अन्य सहायता एजेंसियों की मदद से पानी के संरक्षण का कार्य करवाया। १९९३ और १९९४ के बीच वन विभाग के सहयोग से ४०० हेक्टेयर भूमि पर वृक्षारोपण का काम किया गया जिसमें निजी ज़मीनों पर भी काम हुआ। पिछले दशक में लगभग ११ लाख वृक्ष लगाए गए और आज गांव में १००० हेक्टेयर आरक्षित वन का संरक्षण किया जा रहा है।

ग्रामवासियों ने ५ महत्वपूर्ण नियम अपने लिए खुद ही बनाए हैं, जिनका वे अपने आप पालन करते हैं। वह नियम नशाबंदी, चराईबंदी, कुल्हाड़बंदी (पेड़ काटने पर पाबंदी), नसबंदी तथा श्रमदान हैं। गांव के लिए किए गए ज़्यादातर काम श्रमदान से ही हुए हैं। वर्ष १९९४ से घरेलु पशओं को पशुशालाओं में भोजन दिया जा

रहा है। घास के मैदानों से मिलने वाले चारे के कारण दुग्ध उत्पादन एक बड़ा उद्योग बन गया है। गांववाले चारे की कटाई नियमानुसार प्रतिबंधित रूप से करते हैं। पानी की कमी अब नहीं है पर फिर भी उसे समझ-बूझ के साथ इस्तेमाल किया जाता है। जिन फसलों को ज़्यादा पानी की ज़रूरत है, वे नहीं उगाई जातीं और गहरे ट्यूबवैल खोदना भी बंद है।

गांव के मामलों की देखरेख अब ग्राम सभा तथा एक ग्राम कार्यकारी समिति करती है। गांव के सभी महत्वपूर्ण निर्णय इन्हीं संस्थाओं द्वारा लिए जाते हैं। गांव के लोग खुद ग्राम समिति के सदस्यों को चुनते हैं। ग्राम सभा तथा मंडल आयुक्त की स्वीकृति से ही ग्राम समिति बनती है। समिति में महिलाओं व विभिन्न जातियों के प्रतिनिधित्व को ध्यान में रखते हुए, एक महिला तथा अनुसूचित जाति अथवा जनजाति के एक सदस्य का होना अनिवार्य है।

इन सभी प्रयासों से पर्यावरण तथा ग्रामवासियों, दोनों को फायदा हुआ है। भरपूर पानी की उपलब्धता तथा खेती में रासायनिक खाद व कीटनाशकों का प्रयोग न करने के कारण गांव के लोगों को अब अधिक स्वस्थ व पौष्टिक भोजन मिल रहा है। गांव के लोग अपनी ज़रूरतों तथा बेचने के लिए काफी फसल उगा लेते हैं। अच्छे चारे से गांव में दूध का उत्पादन भी बढ़ गया है। संयुक्त वन प्रबंधन योजना के ज़रिए वन विभाग ने, वनों की देख-रेख का काम गांववालों को ही सौंप दिया है। गांव में ईंधन की ज़रूरतों के लिए प्राकृतिक संसाधनों से बनने वाले ईंधन की व्यवस्था की गई है। जंगलों में वन्यजीवों की संख्या भी बढ़ी है।

वर्ष १९९९ से २००६ तक, दूध उत्पादन १५० लीटर प्रति दिन से बढ़कर २२०० लीटर प्रति दिन तक पहुँच गया है। सिंचित क्षेत्रफल १२० हेक्टेयर से ६०० हेक्टेयर, व गरीबी रेखा के नीचे परिवारों की संख्या १९८ से ५३ तक कम हुई है। साक्षरता दर ३० प्रतिशत से ९९ प्रतिशत हुई है, आकाल तथा गरीबी के कारण गांव छोड़कर जाने वालों की संख्या में कमी आई है और लोग वापस गांव की ओर आने लगे हैं। शराबखोरी और अपराध दर में भी भारी कमी हुई है। सहयोग की भावना, तथा परियोजनाओं की सफलता से गांव के लोगों में जो आत्मविश्वास आया है, उनसे बातचीत करके साफ पता चलता है।

हिवरे बाज़ार को पिछले वर्षों में कई पुरस्कार मिले हैं, और ग्रामवासी पड़ोसी गांवों में जाकर अपने अनुभवों की सीख सबके साथ बांटते हैं।

समर्पित नेतृत्व, खुद लागू किए गए अनुशासन, पुरानी संस्थाओं (जैसे ग्रामसभा) व पुरानी संस्कृति (जैसे श्रमदान) को जीवंत करने, तथा नई योजनाओं (जैसे नसबंदी) के साथ मिलकर काम करने, संवेदनशील वन विभाग, सहायक सरकारी परियोजनाओं, सरकारी मान्यता और साफ दिखने वाले आजीविकाओं व ज़िंदगी में सुधार के प्रभावों ने इस गांव को दण्ड क्षेत्र से एक आदर्श गांव में बदल दिया है।

स्रोत – 'डायरेक्ट्री ऑन कम्यूनिटी कनज़र्वड एरियाज़ इन इंडिया'– कल्पवृक्ष द्वारा संकलित

संपर्क – यशवंत कृषि ग्राम पनलोट विकास संस्था, हिवरे बाज़ार, ब्लाक न. ८, भाजी मार्किट बिल्डिंग, मार्किट यार्ड, अहमदनगर, फोन – ०२४१-३५५७८२

तौउफेमा – नागालैंड

नागालैंड में लगभग सौ से अधिक गांव अपने आसपास की हज़ारों वर्ग किलोमीटर वन भूमि की देखरेख कर उसे फिर से जीवित करने की कोशिश कर रहे हैं। ऐसे गांवों के उदाहरण हैं खोनोमा, लुज़पहु, चिज़ामी, तथा सेन्देन्यू। समुद्र तल से १८०० फीट की ऊंचाई पर स्थित नागालैंड के कोहिमा जनपद में तौउफ़ेमा, एक ऐसा ही गांव है।

पिछले कुछ दशकों में जानवरों के शिकार और पेड़ों के कटान के कारण यहां के घने जंगल तथा वन्यजीवन में बहुत गिरावट आ गई थी। वनों तथा वन्यजीवन के साथ बड़े हुए गांव के बुजुर्गों को यह अहसास हुआ कि अगर जल्दी ही कुछ नहीं किया गया, तो आने वाली पीढ़ियां अपनी इस विशेष धरोहर से विहीन रह जाएंगी। यह भी साफ था कि इस से गांव में पानी की भी ज़बरदस्त कमी हो जाएगी। अतः वर्ष १९९० में, तौउफेमा ग्राम समिति ने सामुदायिक वन के कुछ क्षेत्रों में पंड़ों की कटान व वन्यजीवन का शिकार पर मौखिक प्रस्ताव द्वारा प्रतिबंध लगा दिया। पर इस प्रतिबंध का कुछ खास असर नहीं पड़ा।

वर्ष २००१ में तौउफेमा ग्राम समिति ने एक औपचारिक प्रस्ताव पारित किया जिसमें सामुदायिक वन में सभी तरह के संसाधन उपयोग पर प्रतिबंध लगा दिया गया। तब से ग्राम समिति १६०० हेक्टेयर सामुदायिक जंगल का बचाव कर रही है। इसी दौरान राज्य सरकार ने तौउफेमा को पर्यटक ग्राम घोषित कर दिया और पर्यटकों के रहने व अन्य सुविधाओं के लिए सरकारी पैसा भी उपलब्ध कराया है। इससे जंगल के संरक्षण के काम को भी बढ़ावा मिला।

आरक्षित क्षेत्र की अधिकतर भूमि गांव वालों की सामूहिक भूमि है। पर कुछ भूमि निजी है जो लोगों ने दान कर दी है। गांव ने भी कुछ समुदायिक भूमि पर्यटक काम्पलेक्स बनाने के लिए दी है। 'काम्पलेक्स' की बनावट में वहां के परंपरागत घरों के डिज़ाईन व रूपरेखा की झलक दिखती है।

वर्ष २००३ में गांव के संरक्षण प्रयासों को मान्यता देते हुए राज्य सरकार ने बांस की बाड़ बनाने, चौकीदारी, पर्यटक स्वागत केन्द्र तथा अन्य कार्यों के लिए आर्थिक सहयोग दिया।

गांव के लोगों का कहना है कि जिस क्षेत्र से जंगली जानवर लगभग खत्म हो गए थे, वहां संरक्षण के प्रयासों के कारण तेंदुआ (*Panthera pardus*), जंगली बिल्ली (*Felix chaus*), जंगली सुअर (*Sus scrofa*), हिमालयी साही (*Hystrix brachyuran*), 'स्लो लोरिस' (*Nyctecebus coucang*), काला भालू (*Ursus thibetanus*) तथा गिलहरियों की कुछ प्रजातियां फिर से दिखने लगी हैं। गांववालों के अनुसार, पक्षियों की संख्या भी बढ़ी है, जिसमें – ख़लीज तीतर (*Lophura leucomelana*) तथा 'रैड जंगल फाउल' (जंगली मुर्गी) (*Gallus gallus*) भी शामिल हैं।

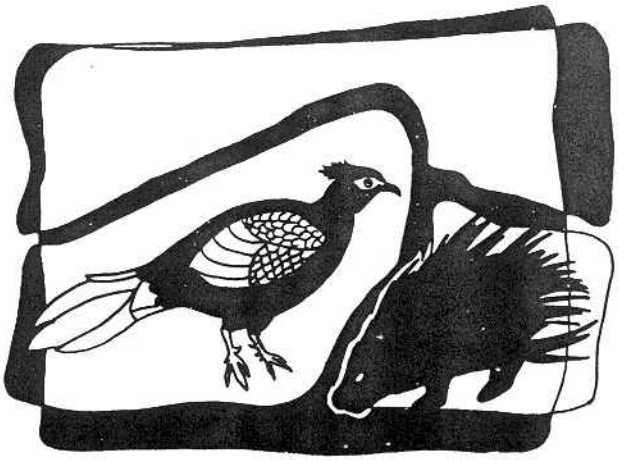

वर्ष २००५ में कल्पवृक्ष के एक दल ने इस क्षेत्र का भ्रमण किया। इस दल ने बताया कि हाल की कोशिशों से जंगल घना हो रहा है और जगह-जगह जैवविविधता के बढ़ने के संकेत भी मिले। पुराने समय की कहानी बयान करते कुछ पुराने वृक्ष भी वहां खड़े थे। कल्पवृक्ष के दल ने यह भी पाया कि तौउफेमा के लोगों द्वारा बचाया वन पक्षियों के चहक से भरा था। इस दल ने गांववालों की पहचान के आधर पर लगभग १०० पक्षी प्रजातियों की सूची भी बनाई।

गांव के इस प्रयास के आर्थिक लाभ तथा आजीविकाओं पर प्रभाव अभी नज़र नहीं आते, पर स्थानीय लोगों को आशा है कि जैसे-जैसे लोगों को यहां पर उपलब्ध पर्यटक सुविधाओं की जानकारी मिलेगी वैसे-वैसे अधिक पर्यटक यहां आएंगे। और यह प्रयास गांव के लोगों के लिए रोज़गार भी पैदा करेगा।

इन जंगलों का नियोजन व पर्यटक सुविधाओं की देखरेख गांव की समिति ही कर रही है। और क्योंकि तौउफेमा तथा पड़ोसी बोत्सा गांव जंगल का मिलकर इस्तेमाल करते हैं, वन विभाग ने एक संयुक्त वन समिति का भी गठन किया है। यह संयुक्त समिति नियम तथा पाबंदियों का निरीक्षण करती है। नियम तोड़े जाने पर कड़ा जुर्माना रखा गया है। जुर्माना न देने पर लोगों को इस प्रयास से होने वाले मुनाफे में हिस्सा नही दिया जाएगा। और फिर से नियम तोड़ने पर उन्हें गांव से निकाला भी जा सकता है।

इस प्रयास को स्थानीय लोगों व राज्य सरकार दानों का ही सहयोग मिल रहा है। गांववाले संरक्षण व अपनी आजीविकाओं की सुरक्षा के लिए दृढ़ता से काम कर रहे हैं। आने वाले समय में इस प्रयास के अध्ययन से लोगों द्वारा किए जा रहे संरक्षण के विषय में काफी कुछ सीखा जा सकता है।

स्रोत – 'डायरेक्ट्री ऑन कम्यूनिटी कनज़र्वड एरियाज़ इन इंडिया' – कल्पवृक्ष द्वारा संकलित

संपर्क – श्री के.वी. लूसा, तौउफेमा गांव, जनपद कोहिमा, नागालैंड

आंध्र प्रदेश

टिम्बकटू – अनभिज्ञता से बहुत दूर

सत्रह साल पहले, टिम्बकटू आंध्र प्रदेश के अनंतपुर ज़िले में एक बंजर भूमि था। अनंतपुर भारत का दूसरा सबसे अधिक आकालग्रस्त ज़िला है। १९९० में, 'द टिम्बकटू कलेकटिव' नाम के एक गैर सरकारी संगठन ने यहां काम करना शुरू किया। यह संगठन कई सालों से उस क्षेत्र में पारिस्थतिकीय सुरक्षा, प्राकृतिक संसाधनों व उनसे जुड़ी आजीविकों की सुरक्षा, तथा कई अन्य सामाजिक विषयों पर काम कर रहा है। टिम्बकटू संगठन ने १०,००० हेक्टेयर बंजर पहाड़ियों को, अनंतपुर के लगभग ११२ पड़ोसी गांवों के ३३,००० लागों की भागीदारी से एक जीवंत जंगल में बदल दिया है।

आजकल, टिम्बकटू संगठन पौधों व जानवरों की सुरक्षा के लिए ७३ किलोमीटर की आग-पट्टी पर काम कर रहा है, क्योंकि गर्मियों में यहां आग लगने का काफी खतरा रहता है। इस ७३ कि.मी. में, ४४० मीटर काम श्रमदान से हुआ और बाकी काम के वेतन से स्थानीय लोगों के लिए आजीविका उपलब्ध कराई गई। यहां के स्थानीय युवाओं, महिलाओं तथा स्कूली छात्रों ने ५१ स्थानीय प्रजातियों के ३६० किलोग्राम बीज इकट्ठे करके जंगल में लगाए।

लोगों ने अपने सामूहिक प्रयास से निरंतर बारिश की कमी वाले क्षेत्र में भी जंगल को पुर्नजीवित कर दिया है। इस वर्ष जंगल से लगभग ५००० भेड़ों व बकरियों के लिए चारा मिला। इसके अतिरिक्त रू. १,५८,००० का चारा, आसापास के किसानों व बकरी वालों को मुफ्त बांटा गया। अलग-अलग प्रजातियों के ६००० पौधे भी नर्सरी में तैयार किए जा रहे हैं। नौ गांवों की २७३ एकड़ ज़मीन में इमली के बगीचे लगाए गए हैं। कल्पवल्ली जंगल में नदी के किनारे हज़ारों खजूर के वृक्ष लगाए गएं हैं, जहां से नौ गांवों के ६९ गरीब परिवार खजूर इकंट्ठा करके बेचते हैं और इससे अपनी रोज़ी-रोटी चलाते हैं। बताया गया है कि यह परिवार रू.१,०२,००० मूल्य के २२,००० किलो खजूर अब तक बेच चुके हैं।

स्रोत – 'द टिम्बकटू कलैक्टिव', वार्षिक रिपोर्ट २००५-०६

संपर्क – श्री सी.के.गांगुली, पो.टिम्बकटू कलेकटिव, ग्राम सी.के पल्ली, अनंतपुर ज़िला, आंध्र प्रदेश, भारत ५१५१०१ इ-मेल – timbaktu@vsnl.com

शिकारियों के विरुद्ध उठी जनजातियाँ

पिछले कुछ वर्षो तक शिकारीं तथा लकड़ी के माफिया आंध्र प्रदेश के ख़म्माम ज़िले में अन्नापुरेद्दीपल्ली के जंगल को बरबाद कर रहे थे। पर अब कुछ समय से यह अपराधी इन जंगलों से दूर रहने में ही अपना भला मानते हैं।

यहां के जनजातीय युवाओं ने वन रक्षकों के साथ मिलकर एक वन संरक्षण समिति बनाई है जिसके अंतर्गत वे इस वन के पौधों व

जानवरों की रक्षा का काम कर रहे हैं। उन्होंने सागवान की लकड़ी व अन्य संसाधनों से लदी कई गाड़ियां पकड़ी हैं। इन गाड़ियों के साथ चल रहे दो ऊँची पहुंच वाले नेताओं को भी वन विभाग के हवाले किया गया। इन युवाओं की इस चौकीदारी से झुंझलाकर, अपराधियों ने वन संरक्षण समिति के एक सदस्य वाद्देपल्ली बाबू पर जानलेवा हमला किया। पर गाँव वालों ने समय पर पहुँचकर हमला करने वालों को पकड़ लिया।

स्रोत - डी.चन्द्र भास्कर 'टाईबल्स अप इन आमर्स अगेंस्ट पोचर्स', द हिन्दु ०८/१२/२००६

गुजरात

युवा जीव वैज्ञानिक - हाकाभाई मकवाना

प्रायः नारियल काटने वाले, नारियल के पेड़ों पर घोंसला बनाने वाले गिद्धों को, अपनी आजीविका के लिए खतरा मानते हैं। इसी कारण वे गिद्धों के घोंसलों को अक्सर तोड़ देते हैं। परंतु नारियल काटने वाले हाकाभाई मकवाना अपने व्यवसाय के बावजूद भावनगर के महुवा जनपद के 'गीर नेचर क्लब' द्वारा चलाए जा रहे 'गिद्ध बचाओ अभियान' से जुड़े। मकवाना के प्रयास सफल हुए, और आज लगभग ५० नारियल काटने वाले 'जटायु मित्र' संगठन से जुड़ चुके हैं।

मकवाना ने अपनी दिनचर्या को दो भागों में बांटा हुआ है - पहले भाग में वह पेड़ों से नारियल काटते हैं, तथा दूसरे भाग में गिद्धों के संरक्षण के लिए काम करते हैं। इसमें गिद्धों के घोंसलों की गिनती, चोट लगे गिद्धों की सहायता, तथा वन विभाग को गिद्धों की स्थिति से अवगत कराना शामिल है।

नारियल काटने वालों के इन संरक्षण प्रयासों से प्रभावित होकर राज्य सरकार ने उनके लिए मुआवज़े की भी व्यवस्था की है, क्योंकि गिद्धों के घोसले वाले पेड़ों से नारियल ना निकालने से लोगों की कमाई पर असर पड़ता है। मकवाना के इन प्रयासों को मान्यता देते हुए, ए.बी.एन. ऐमरो बैंक ने उन्हें 'युवा प्रकृति विज्ञानी' पुरस्कार से सम्मानित भी किया है।

स्रोत - दिव्या समा, 'फ्रॉम जटायु मित्र टू गिद्धराज - मकवाना इज़ यंग नैचुरलिस्ट, २००६', एक्सप्रेस इंडिया, मुंबई न्यूज़लाईन, ०८/१२/२००६.

कर्नाटक

पेलिकन परिवार

'स्पॉट बिल्ड पेलिकन' (चितकबरी चोंच वाले पेलिकन) (*Pelicanus philippensis*) विश्व स्तर पर अब दुर्लभ हो चुकी है। कर्नाटक के कोक्करे बेल्लूर गांव के लागों का इन पक्षियों के साथ परंपरागत संबंध रहा है। पीढ़ियों से ये लोग इन पक्षियों की सुरक्षा व इनकी संख्या बढ़ाने के लिए काम कर रहे हैं। मछली खाने वाले इन पक्षियों के मल में पोटाशियम तथा फॉस्फेट होता हैं जो यहां के खेतों के लिए बढ़िया खाद का काम करता है। ६० के दशक की शुरुआत से ही इस इलाके में पेड़ों की कमी होने लगी, जिससे यहां आने वाले इन पक्षियों की संख्या भी कम हो गई। तब एक शोधकर्ता, मनु के., ने इन पक्षियों के प्रति अपने लगाव से गांव वालों तथा पक्षियों के बीच पारस्परिक संबंध को फिर से स्थापित करने की कोशिश की। और यह संबंध इन पक्षियों के संरक्षण के लिए पहले से भी मज़बूत प्रेरणा का स्रोत बन गया। आज गांव के युवक व बच्चों ने 'हेज्जारले बालागा' (पेलिकन परिवार) नाम का एक संगठन बनाया है। यह संगठन जलाशयों को साफ रखने के साथ साथ सड़कों तथा अपनी निजी ज़मीन पर इमली, बरगद तथा पोर्शिया आदि के पेड़ लगाते हैं, जिससे इन पक्षियों को घोंसले बनाने की जगह मिले। ये लोगों को पुराने पेड़ काटने से रोकते हैं, तथा बीमार व घोंसलों से गिरे हुए चूज़ों की देखभाल तब तक करते है, जब तक वे पूरी तरह से ठीक नहीं हो जाते।

वर्ष २००६ में, गांव में ४०० घोंसलों की गिनती की गई। यह संख्या अब तक की सबसे बड़ी संख्या थी। गिरे हुए १७ चूज़ों को भी देख-रेख के बाद छोड दिया गया। यहां बिजली के तारों के बीच अंतर बहुत कम होने के कारण पिछले दो वर्षों में कई पक्षी, बिजली के तारों से चिपककर जल गए थे। हाल में मिली जानकारी के अनुसार लोगों ने अधिकारियों से कहकर इन तारों के बीच की दूरी बढ़वा दी है। जैसे-जैसे ये गांव इन पक्षियों के संरक्षण प्रयास के लिए प्रचलित हो रहा है, वैसे-वैसे यहां आने वाले पर्यटकों की संख्या बढ़ती जा रही है। गांव के लोगों को डर है कि उनके छोटे से गांव को एक बड़ा पर्यटकं केन्द्र बना दिया जाएगा - इससे यहां की स्थानीय संस्कृति तथा यहां के पक्षियों दोनों पर ही बुरा असर पड़ेगा। 'हेज्जारले बलागा' ने हाल में ही घोंसलों के लिए ४ बड़े पेड़ों वाली ज़मीन खरीदी है, जहां वे पर्यटकों को पयार्वरण के बारे में जानकारी देने की व्यवस्था कर रहे हैं।

स्रोत - के. मनु के साथ व्यक्तिगत साक्षात्कार

संपर्क - के. मनु, मैसूर एमेच्योर नैचुरलिस्टस, ५७१, ६ क्रास, अनिकेथना रोड, कुवेम्पु नगर, मैसूर, भारत - ५७००२३

बांकापुरा मयूर संरक्षण क्षेत्र

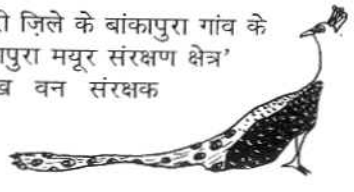

कर्नाटक राज्य सरकार ने हवेरी ज़िले के बांकापुरा गांव के १३६.१० एकड़ क्षेत्र को 'बांकापुरा मयूर संरक्षण क्षेत्र' घोषित कर दिया है। प्रमुख वन संरक्षक (वन्यजीव) द्वारा जारी प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया है, कि

संबंधित स्थानीय समुदायों तथा सरकारी विभागों की सलाह के बाद ही यह घोषणा की गई है।

स्रोत –'पीकॉक सैन्चुरी एट बांकापुरा', द हिन्दु, ०६/०७/०६

मध्य प्रदेश

'लेस्सर फ्लोरिकन' पक्षी की सुरक्षा के लिए आर्थिक सहयोग

पश्चिमी मध्य प्रदेश, 'लेस्सर फ्लोरिकन' पक्षी *(Sypheotides indica)* के मुख्य प्रजनन केन्द्रों में से एक है। आर्थिक सहयोग देकर मध्य प्रदेश में इस अत्यंत दुर्लभ पक्षी के संरक्षण के लिए लोगों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। 'लेस्सर फ्लोरिकन' पक्षी को 'वन्यजीव संरक्षण अधिनियम, १९७२' के अंतर्गत संरक्षित घोषित किया गया है। 'लेस्सर फ्लोरिकन' के संरक्षण के लिए मध्य प्रदेश सरकार ने वर्ष १९८३ में सैलाना, ज़िला रतलाम में, तथा धर ज़िले के सरदारपुर में दो अभ्यारण्यों की घोषणा की थी। लेकिन अभ्यारण्य ऐसी ज़मीन पर बनाए गए जहां खेती व राजस्व ज़मीन थी। अभ्यारण्य बनने के कारण इस भूमि के उपयोग पर प्रतिबंध लग गए और इसी कारण वहां के किसान इस संरक्षण प्रयास के विरोध में थे।

किसानों का सहयोग प्राप्त करने के लिए वन विभाग ने अपनी भूमि पर 'खरमोर' या 'लेस्सर फ्लोरिकन' की उपस्थिति की सूचना देने वाले किसानों को नकद पुरस्कार देने की योजना शुरु की। रतलाम ज़िले में योजना के पिछले १ साल में २३ किसानों को लगभग रू. ९९,००० दिए जा चुके हैं। गांव और अभ्यारण्य के आसपास के क्षेत्र में योजना की जागरुकता बढ़ाने के लिए रू. ६०,००० खर्च किए गए।

२००४ से २००६ के बीच सैलाना अभ्यारण्य में 'लेस्सर फ्लोरिकन' की संख्या ९ से बढ़कर २६ हो गई है। डा. एच. एस. पाबला के अनुसार ''नकद प्रोत्साहन योजना ने एक वर्ष के भीतर वह कर दिखाया, जो अभ्यारण्यों की स्थापना भी नहीं कर पाई थी''। परंतु सरदारपुर अभ्यारण्य में इस योजना से अभी तक कोई फायदा नहीं हुआ।

स्रोत – मिलिंद घटवाई, 'कैश इन्सेंटिव स्कीम गिव्ज़ एन्डेन्जर्ड बर्ड फ्रैश लीज़ ऑफ लाइफ़', इंडियन एक्सप्रेस, २७/०१/२००६.

मणिपुर

स्थानीय समुदाय द्वारा 'स्लो लोरिस' संरक्षण के लिए एक परियोजना

उत्तर पूर्व भारत में प्रकृति संरक्षण के लिए अरण्यक सूक्ष्म अनुदान कार्यक्रम के लिए सलाम राजेश को चुना गया है। इस परियोजना का शीर्षक 'कम्यूनिटी बेस्ड स्लो लोरिस कन्ज़रवेशन' है। इस परियोजना में 'स्लो लोरिस' व उसके आवास के संरक्षण के लिए हेंगलेप उपमंडल, चूराचन्दपुर ज़िला, मणिपुर के सादु-टोकपा गांव के जंगल में काम किया जाएगा। 'स्लो लोरिस' इस क्षेत्र की प्रमुख प्रजाति है।

सम्पर्क – सलाम राजेश, सागोलबांद सलाम, लेईकाई, पोस्टः इम्पफाल-१, मणिपुर फोन – ०३८५-२२२३६५ ई-मेल salamrajesh@rediffmail.com और salraj_imp@yahoo.com

उड़ीसा

औषधीय पौधों के बदले आयुर्वेदिक चिकित्सा की व्यवस्था

उड़ीसा के एक शांत कोने में, बोलनगीर ज़िले में 'साबुजा विप्लव' – स्थानीय सामुदायों द्वारा एक विशिष्ट हरित क्रांति – चल रही है। इसका श्रेय वन विभाग के सेवानिवृत कर्मचारी, श्री संतोष कुमार दास, तथा उनकी पत्नी लिलि दास की नई सोच को जाता है। दोनों मिलकर वहां एक आयुर्वेदिक अस्पताल चला रहे हैं, जहां लोग वहां पर पाए जाने वाले औषधीय पौधों को अस्पताल में देकर उस के बदले में अपने लिए इलाज और दवाईयां ले सकते हैं। यहां आने वाले ७० प्रतिशत लोग औषधीय पौधों से अपने इलाज का भुगतान करते हैं। अस्पताल की अपनी एक औषधीय पौधों के बगीचे की परियोजना है, जिसमें साधरण बीमारियों के इलाज में काम आने वाले २० औषधीय पौधों की प्रजातियां लगायी जाती हैं। अस्पताल इन औषधीय पौधों की पहचान करना सिखाने के लिए शिविर भी लगाता है।

पश्चिमी उड़ीसा, औषधीय पौधों का भंडार है। पहले इनको इकट्ठा करने वाले लागों को इनकी अच्छी कीमत नहीं मिल पाती थी। पर श्री.दास के प्रयासों से न सिर्फ गांव के लागों को अच्छी स्वास्थ्य सुविधाएं मिली हैं, बल्कि इन पौधों को उचित मूल्य पर बेचने के लिए एक व्यवस्था भी की गई है। इसके साथ-साथ इस प्रयास से गांव के लागों को अपने क्षेत्र में उपलब्ध इन विविध औषधीय पौधों तथा उनसे संबंधित पंरपरागत ज्ञान को बचाए रखने के लिए प्रोत्साहन भी मिला है। आजकल लिली दास, नर्सरी की देखभाल करती हैं तथा संतोष दास आयुर्वेद तथा अन्य प्राचीन ग्रंथों के अध्ययन में लगे हैं। उनके ये प्रयास जैवविविधता व स्थानीय लागों के स्वास्थ्य के लिए एक शुभ समाचार है।

स्रोत –विश्वजीत पाढ़ी, 'पे विद मेडेसिनल प्लांटस एट हर्बल हौस्पीटल', सिविल सोसाइटी अंक ३, नं. ५, फरवरी २००६.

राजस्थान

उदपूरिया गांव का तालाब

राजस्थान के कोटा ज़िले में उदपूरिया गांव का सामूहिक तालाब एक लोगों द्वारा संरक्षित क्षेत्र है। तालाब में बारिश का पानी इकट्ठा होता है, तथा गर्मी में चंबल नदी से इसमें पानी आता है। स्थानीय लोगों का कहना है कि १९९४ से यहां 'पेंटेड स्टौर्क' (रंगबिरंगे सारसनुमा पक्षी) *(Mycteria leucocephala)* प्रजनन के लिए आने लगे हैं। पर १९९८ में तालाब सिंघाड़े की पत्तियों से ढके होने के कारण, सिर्फ ७ जोड़ों ने तालाब के किनारे पर अंडे दिए। वर्ष १९९९ में 'हडोथी नैचुरलिस्ट सोसाइटी' नामक एक स्थानीय संस्था ने गांव के अन्य लोगों के साथ मिलकर हाथ से तालाब की सफाई की। उसके बाद की प्रजनन ऋतु में ९५ घोंसले बने तथा सभी चूज़े ज़िंदा भी रहे। २००५ में लगातार संरक्षण के प्रयास को जारी रखते हुए, गांव के लोगों और वन विभाग ने मिलकर, तालाब के चारों ओर उपयुक्त प्रजातियों का वृक्षारोपण किया।

श्री अनिल के नायर, जो इस तालाब को ठीक करने के काम में पहले से ही जुड़े हुए हैं, उनके अुनसार, तालाब में फिर से सिंघाड़े की पत्तियां पैदा होने लगी हैं, तथा गांव के लोग व सरकारी अधिकारी इसकी सफाई के बारे में बातचीत कर रहे हैं। २००६ में की गई गिनती में २३२ घोंसले पाए गए, तथा हर घोंसले में ३-४ चूज़े थे। इस बार की एक दिलचस्प घटना यह रही कि सभी पक्षियों ने अपने घोंसले गांव के बाहर बनाए। पहले वे अपने घोंसले गांव के बीच में बनाते थे।

स्रोत - 'डायरैक्ट्री आन कम्यूनिटी कनज़र्वड एरियाज़ इन इंडिया' कल्पवृक्ष तथा श्री अनिल. के. नायर से व्यक्तिगत साक्षात्कार के पश्चात संकलित

संपर्क - अनिल. के. नायर, ८१ शॉपिंग सेंटर, कोटा, राजस्थान ३२४००७, ई-मेल - crane_anil@rediffmail.com

बिश्नोई समुदाय का पुनः प्रयास

अमृता देवी, एक ऐतिहासिक बिश्नोई महिला, और उनके ३६२ साथियों ने कई वर्षों पहले ख़ेजरी (*Prosopis cineraria*) वृक्षों को बचाने के लिए, अपने जीवन का बलिदान कर दिया था। आज उसी बिश्नोई समुदाय ने एक बार फिर उस त्याग को गौरव दिया है। वे वन्यजीव संरक्षण के प्रति उतने ही संवेदनशील हैं, जितने कि उनके पूर्वज थे। यह बिश्नोई समुदाय की दृढ़ता ही थी, जिसके कारण हिन्दी फिल्मों के मशहूर अभिनेता सलमान खान को चिंकारा (*Gazella bennettii*) का शिकार करने पर पांच वर्ष के कड़े कारावास तथा रु.२५,००० का जुर्माना हुआ। इस फैसले का स्वागत करते हुए पूर्व विधान सभा सदस्य हीरालाल बिश्नोई कहते हैं, "इससे ५२० वर्ष पुरानी, समुदाय की प्रकृति तथा वन्यजीवन को किसी भी कीमत पर बचाने की इच्छाशक्ति को दृढ़ता मिली है।"

स्रोत - पूर्वा कलिता, 'बिश्नोईज़ प्लैज टू ब्रिंग बैक सलमान, पनिश हिम", सिविल सोसाइटी, अंक ३, नं ८, मई २००६

पश्चिम बंगाल

कलिकापुर के युवा पारिस्थितिकी आलेखक

मिथुन धरा, राजू दास, संजय मोन्डॉल, शानू मैती, भोला बैद्या तथा शुशांतो घराई ऐसे युवा हैं जो ज़यादातर स्कूल नहीं गए। ये पूर्वी कोलकाता में कलिकापुर गांव के रहने वाले हैं, जो अभी तक विकास की पहुंच से दूर ही रहा है। परंतु उन सभी का एक ही गुरू है - कलिकापुर नहर जो कोलकाता शहर की सारी गंदगी कलिकापुर के जलाशयों में ला फेंकती है। पर्यावरणविद् तथा वृतचित्र निर्माता निलंजन भट्टाचारजी एक मछली बाज़ार में मिथुन धरा से मिले जहां मिथुन मछुआरों को मछली साफ करने मे मदद कर रहे थे। युवा मिथुन की कलिकापुर की जैवविविधता के विषय में विस्तृत जानकारी से भट्टाचारजी अत्यधिक प्रभावित हुए। जिसकी वजह से उन्होंने मिथुन तथा उसके मित्रों के साथ मिलकर कलिकापुर के परिस्थितिकी का नक्शा बनाने का काम शुरु किया।

युवाओं के इस दल ने, पौधें की १४२ प्रजातियों की पहचान की - इनमें खाने योग्य व कुछ औषधीय विशेषताएं वाली भी थीं; पक्षियों की १६ प्रजातियां, जिनमें से कुछ लुप्त होने की कगार पर हैं तथा कलिकापुर नहर में पायी जाने वाली काफी मछली प्रजातियों की भी इन्होंने सूचि बनाई।

कलिकापुर में अपने मित्रों के साथ काम करते हुए भट्टाचारजी ने स्थानीय समुदायों के अपने आस-पास के प्राकृतिक संसाधनों के साथ परस्पर लेन-देन के रिश्ते का भी अध्ययन किया। उनके अपने शब्दों में, "कलिकापुर में हर व्यक्ति पेड़ों की टहनियों तथा फूल-पत्ति आदि को ईंधन के लिए प्रयोग करता है, लेकिन फिर भी कोई किसी पेड़ को काटता नहीं है। वे पके हुए व पौष्टिक बाबला फल तथा जंगली अंजीर खाते हैं, जिनके बारे में हम शहरी लोगों ने सुना भी नहीं होगा। कच्चे फलों को बीच से खोखला करके तेल की बत्ती जलाने के लिए दीपक बनाते हैं।"

भट्टाचारजी का मानना है कि हमारे शहरों की योजना बनाने वालों आजकल पहले तो प्राकृतिक जैवविविधता को नष्ट करते है और फिर उसी क्षेत्र में हरियाली लाने के लिए खूब पैसा खर्च करते है, जब उन्हें इस प्रकार की विशेष परिस्थितिकी वाले क्षेत्रों की ओर संवेदनशील होना चाहिए और उन्हें बचाए रखने के प्रयास करने चाहिए।

स्रोत - रीना मुखर्जी, 'बॉयज़ मैप कोलकाताज़ बायोडायवर्सिटी'; सिविल सोसाइटी, अंक ३, नं ८, मई २००६

श्राष्ट्रीय समाचार

बाघ प्राधिकरण की स्थानीय समुदायों पर निर्भरता

बाघ कार्यकारी दल (टाइगर टास्क फोर्स) के सुझावों के अनुसार, वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, २००६ के तहत्, ४ सितम्बर को

राष्ट्रीय बाघ संरक्षण प्राधिकरण का गठन हुआ। राष्ट्रीय बाघ संरक्षण प्राधिकरण में विभिन्न मंत्रालयों से १६ सदस्य तथा आठ गैर सरकारी विशेषज्ञ हैं।

दिल्ली में आयोजित अपनी पहली बैठक में राष्ट्रीय बाघ संरक्षण प्राधिकरण ने उन सभी राज्यों जहां बाघ पाए जाते हैं, के स्थानीय वन-वासियों को निम्न स्तरीय (फील्ड स्टाफ) पदों पर भरती करने का फैसला किया।

राष्ट्रीय बाघ संरक्षण प्राधिकरण के सचिव राजेश गोपाल ने इंडियन एक्सप्रेस से हुई वार्ता में कहा कि स्थानीय जनता को अलग रख के बाघ का संरक्षण नहीं किया जा सकता। उनको इस प्रक्रिया में शामिल करना ज़रूरी है, चाहें इसके लिए उन पदों के लिए न्यूनतम योग्यताओं की आवश्यकता को बदलना भी पड़े।

स्रोत - 'टाईगर बॉडी टू रिलाई ऑन लोकल हन्टिंग कम्यूनिटीज़', एक्सप्रेस न्यूज सर्विस, नई दिल्ली, नवम्बर २६.

अंतर्राष्ट्रीय समाचार और टिप्पणी

सामुदायिक संरक्षण के नायकों को श्रद्धांजलि

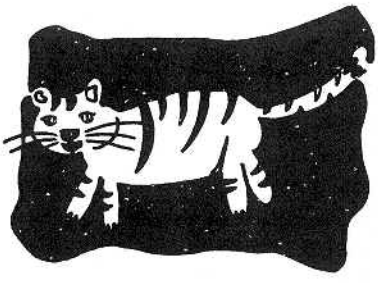

२४ सितम्बर को नेपाल हिमालय में हुई एक हेलीकॉप्टर दुर्घटना में २४ व्यक्तियों की मृत्यु हो गई। यह सभी धरती पर जीने के विवेकपूर्ण तरीकों को सुझाने वाले लोग थे - जिनमें नेपाल के वन व मृदा संरक्षण राज्य मंत्री, श्री गोपाल राय, तथा संरक्षण के क्षेत्र में काम करने वाले कुछ खास विशेषज्ञ जैसे चन्द्र गुरूंग, मिंगमा नोरबू शेरपा, नारायण पोउडेल, तथा तीर्थ मान मास्की थे।

वे अपने एक सपने को हकीकत में बदलने की शुरुआत ही कर रहे थे, जब पहाड़ों ने उन्हें निगल लिया। यह दल ताप्लेजंग से वापस लौट रहा था, जहाँ वे 'कंचनजंगा संरक्षण क्षेत्र' के प्रबंधन की ज़िम्मेदारी स्थानीय समुदायों को सौंप आए थे।

कंचनजंगा जैसे संरक्षण क्षेत्र के प्रबंधन का विकेन्द्रीकरण एक साहसी कदम है। दुर्भाग्य से ऐसा अक्सर नहीं हो पाता है। खासतौर पर भारत जैसे देशों के लिए यह एक अच्छा सबक है जहां अधिकतर भागों में वह ब्रिटिश कालीन संरक्षण व्यवस्थाएँ विद्यमान हैं, जो सरकारी अफसरों के हाथों में केन्द्रित हैं। इस कदम से, नेपाल ने अपनी इस मंशा को स्पष्ट कर दिया है, कि वह जैवविविधता तथा प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन की ज़िम्मेदारी उन समुदायों को सौंपना चाहता है जो उन संसाधनों के नज़दीक रहते हैं, न कि उस व्यवस्था को जो क्षेत्र से दूर लगातार बदलते अफसरों के हाथ में हो।

आज पूरे विश्व में संरक्षण की एक नई सोच पनप रही है - जहां वन्यजीवन की सुरक्षा का उत्तरदायित्व तथा वन से मिलने वाले लाभों को वहां के रहने वाले लोगों के साथ बांटने की व्यवस्था है।

दो दिशाएं साफ नज़र आ रही हैं -

१ सहयोगी संरक्षित क्षेत्र - जहाँ सरकार व समुदाय संयुक्त रूप से संरक्षण का प्रबंधन करें, तथा

२ सामुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्र - जहाँ प्रबंधन में मुख्य भूमिका स्थानीय व्यक्तियों व समुदायों की हो।

नेपाल में, उपमहाद्वीप के सबसे बड़े संरक्षित क्षेत्रों में से एक, अन्नपूर्णा, १९९० के दशक में 'सहयोगी संरक्षित क्षेत्र' बन गया, जब उसका प्रबंधन एक गैर सरकारी संस्था तथा वहां रहने वाले समुदायों को दे दिया गया। इसके ७००० वर्ग किलोमीटर से अधिक के क्षेत्रफल में जानवरों तथा इस क्षेत्र में रहने वाले लागों की आजीविका एवं आय सभी में स्पष्ट बढ़ोत्तरी हुई है। चन्द्र गुरूंग तथा मिंगमा नोरबू शेरपा, ने इस प्रक्रिया में एक अहम भूमिका निभाई थी। वे भी इस हवाई हादसे का शिकार हो गए।

भारत जैसे देशों में रूढ़िवादी संरक्षण व्यवस्था के कारण लाखों समुदायों को भयंकर कीमत चुकानी पड़ी है। इनमें लाखों व्यक्तियों का विस्थापन हुआ और उन्हें अपनी संपत्ति से हाथ धोना पड़ा। इस स्थिति के रहते वन्यजीव संरक्षण के लिए स्थानीय लोगों का सहयोग मिल पाना बहुत कठिन हो गया है, इससे वन्यजीवों के भविष्य को भी भयंकर खतरा है।

इसके विपरीत, अगर हम सहयोगी या समुदाय आधारित संरक्षण की योजना बनाएं, जिसमें लोगों की क्षमताएं बढ़ाने और उन्हें मुश्किलों का सामना करने के लिए सशक्त किया जाए तो शायद वन्यजीव संरक्षण में कहीं अधिक सफलता पायी जा सकती है। अगर हम अपने कुछ 'संरक्षित क्षेत्रों' में भी इस उदाहरण को लागू कर पाएं, तो यह इस दुर्घटना में मृत स्वर्गीय संरक्षकों के प्रति एक उपयुक्त श्रद्धांजलि होगी।

स्त्रोत - आशीष कोठारी, 'लेसंस फ्रॉम नेपाल', टाइम्स ऑफ इंडिया, नवम्बर ७, २००६

संपर्क - आशीष कोठारी, संपादकीय पते पर, ई-मेल - ashishkothari@vsnl.com

आप भी शामिल हों

उड़ीसा में सामुदायिक सरंक्षण पर सम्मलेन/कार्यशाला

भुवनेश्वर, उड़ीसा में 'उड़ीसा राज्य में समुदायों द्वारा संरक्षण' विषय पर सितंबर, २००७ को तीन दिवसीय सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है। इस सम्मेलन का आयोजन, वसुन्धरा तथा कल्पवृक्ष संस्थाओं द्वारा, कन्सर्न वर्ल्ड वाइड, हीवोस, डेक्कन डेवलपमैन्ट सोसाईटी तथा वाइल्डलाईफ सोसाइटी आफ उड़ीसा के आर्थिक सहयोग से हो रहा है।

उड़ीसा, देश के कुछ ऐसे चुनिंदा राज्यों में से एक है, जहाँ हज़ारों की संख्या में स्थानीय समुदाय अपनी आजीविका की ज़रूरतें पूरी करने के साथ-साथ, जैवविविधता संरक्षण में भी सक्रिय हैं। इन प्रयासों

की, जैवविविधता संरक्षण, पारिस्थितिकीय सेवाएं, तथा वन्यजीवों के खास क्षेत्रों के आपसी जुड़ाव को बनाए रखने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है। हज़ारों लोगों की आजीविका और मूलभूत ज़रूरतों को पूरा करने के साथ-साथ, उनके आर्थिक संसाधनों तथा उनकी सांस्कृतिक एवं राजनैतिक पहचान कायम रखने में भी इन प्रयासों की उतनी ही महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

सम्मेलन का उद्देश्य है कि संरक्षण का कार्य कर रहे समुदायों का एक दूसरे के साथ सम्पर्क हो क्योंकि अक्सर ये लोग अकेले पड़ जाते हैं। इसके अतिरिक्त, राजनीतिज्ञों, नीति-निर्धरकों, उद्योगपतियों, तथा आम जनता के बीच इन संरक्षण प्रयासों के प्रति जागरूकता पैदा हो। सम्मेलन का एक अन्य उद्देश्य है कि इन प्रयासों के लिए खतरा पैदा करने वाली प्रक्रियाओं व उनके समाधान के विषय में भी चर्चा हो सके।

सम्मेलन के चार प्रमुख विषय होंगे -

- वन क्षेत्रों का समुदायों द्वारा संरक्षण
- विशिष्ट वन्य प्रजातियों का समुदायों द्वारा संरक्षण
- समुद्रीय स्थलों का समुदायों द्वारा संरक्षण
- समुदायों द्वारा पारंपरिक कृषि व्यवस्था व पारंपरिक बीजों का संरक्षण

सम्मेलन में औपचारिक रूप से चर्चाएं चलाई जाएंगी। इसके साथ अनौपचारिक फोटो प्रदर्शनियों, स्लाईड प्रस्तुति, फिल्म व वृतचित्र प्रदर्शन, नुक्कड़ नाटक, संगीत व नृत्य, कवि सम्मेलन आदि माध्यमों का भी प्रयोग किया जाएगा।

संपर्क - श्वेता मिश्रा, वसुंधरा, प्लॉट नं. १५, शहीद नगर, भुवनेश्वर, फोन : ०६५७.२५४२०११ / १२ ई-मेल - swetamishra1@gmail.com या vasundharanr@satyam.net.in

अथवा

नीमा पाठक, संपादकीय पते पर, ई-मेल - natrails@vsnl.com

नए प्रकाशन

१. 'मैनेजिंग प्रोटैकटेड एरियाज़ - ए ग्लोबल गाईड'

संपादन -माईकल लॉकवुड, ग्रेम.एल.वॉरबॉयज़, आशीष कोठारी

प्रकाशन -अर्थस्कैन, यू.के. तथा अर्थस्कैन, यू.एस.ए, २००६

प्रकाशन अधिकार -२००६, आई.यू.सी.एन., माईकल लॉकवुड, ग्रेम.एल.वॉरबॉयज़, आशीष कोठारी

इस पुस्तिका में संरक्षित क्षेत्रों के प्रबंधन के सभी विषय शामिल हैं। इसके संकलन में विस्तृत अंतर्राष्ट्रीय अध्ययनों, हजारों संक्षिप्त टिप्पणीयों, नक्शों, रंगीन चित्रों, आदि का प्रयोग हुआ है। इसके अतिरिक्त विश्लेषण माध्यमों, विषय सूचियों के ज़रिए राष्ट्रीय उद्यानों के प्रबंधन के कई मुद्दों पर चर्चा की गई है - जैसे जैवविविधता, प्राकृतिक विरासत व आर्थिक प्रबंधन आदि। इस पुस्तिका में २१ वीं सदी के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत भी प्रस्तुत किए गए हैं। यह अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किए जा रहे नवीन प्रयासों को दर्शाते हुए यह विश्लेषण भी करती है कि संरक्षित क्षेत्रों से संबंधित विशेषज्ञों में क्या-क्या हुनर आवश्यक हैं।

२. 'पार्टिसिपेटरी कंज़रवेशन - पैराडाईम शिफ्ट्स इन इनटरनेशनल पॉलिसी - अ कम्पाईलेशन आफ आउटपुट्स फ्रॉम ग्लोबल इवेंट्स रिलेटिड टू पार्टिसिपेटरी कंज़रवेशन'

संपादन - तसनीम बालानीसोरवाला, आशीष कोठारी व मधुलिका गोयल

प्रकाशन -कल्पवृक्ष, भारत के साथ, आई.यू.सी.एन., स्विटज़रलैण्ड व आई.यू.सी.एन.यू.के. २००४

प्रकाशन अधिकार -२००४, 'आई.यू.सी.एन. एंड नैचुरल रिसोर्सिज़'

यह पुस्तिका अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व की दो घटनाओं - ५वी वर्ल्ड पार्क कांग्रेस डरबन, २००३ तथा ७वीं जैवविविधता संधि के लिए पार्टियों के सम्मेलन, कुआला लम्पुर, २००४ में उठाए गए मुख्य मुद्दों को रेखांकित करती है। इसमें संरक्षित क्षेत्रों व समुदायों का विस्तृत अध्ययन भी है। यह संरक्षित क्षेत्रों की जैवविविधता से लेकर स्थानीय व घुमंतु समुदायों द्वारा उन क्षेत्रों की जैवविविधता के संरक्षण के महत्व जैसे मुद्दों को उजागर करती है।

३. 'लिंकिग कंज़रवेशन विद लाईवलिहुड - लेसंस फ्रॉम मैनेजमेंट आफ गीर प्रोटैकटेड एरिया इन वेस्टर्न इंडिया'

लेखक - अमिता शाह

शोध पत्र संख्या १४८, सितम्बर, २००४

प्रकाशन -गुजरात इंस्टीट्यूट आफ डैवलैपमैंट रिसर्च, अहमदाबाद

यह शोध पत्र पश्चिम भारत में गीर राष्ट्रीय उद्यान व अभ्यारण्य के संदर्भ में प्रबंधन की वैकल्पिक व्यवस्थाओं का अध्ययन करता है। इसमें देश के प्रमुख संरक्षित क्षेत्रों में चलाए जा रही परिस्थितिकी विकास (ईको डैवलैपमैंट) परियोजनाओं का भी विश्लेषण है। ईको डैवलैपमैंट परियोजनाओं में संरक्षित क्षेत्रों के आसपास के गांवों में वैकल्पिक संसाधनों के ज़रिए आजीविकओं को बढ़ावा देने का काम किया जाता है। लेखिका का सुझाव है कि संरक्षित क्षेत्रों के अंदर व बाहर पाए जाने वाले जंगलों को संरक्षण की दृष्टि से एक ही इकाई

मानना चाहिए। इससे इन क्षेत्रों के बेहतर संरक्षण में सहायता मिलेगी।

४. 'अ सिंपल गाईड टू इंटलैक्चुअल प्रौपर्टी राइट्स, बायोडायवर्सिटी एण्ड ट्रैडीशनल नॉलेज'

लेखक – तेजस्विनी आप्टे

प्रकाशन –कल्पवृक्ष, ग्रेन व आइ.आइ.ई.डी., पुणे/दिल्ली, २००६

भौतिक संपत्ति अधिकार (इंटलैक्चुअल प्रौपर्टी राइट्स) के विस्तृत प्रभावों के बावजूद भी इन मुद्दों पर चर्चा कुछ ही नीति निर्धरकों तथा शिक्षाविदों तक सीमित है। यह पुस्तिका 'आई.पी.आर', जैवविविधता तथा उससे संबंधित परंपरागत ज्ञान को स्पष्ट, तथा आसान भाषा में प्रस्तुत करती है। प्रश्नोत्तर के रूप में प्रस्तुत यह पुस्तिका मूलभूत प्रश्नों से शुरुआत कर, अन्य कठिन मुद्दों तक पहुंचती है, जो इस विषय को आम लोगों से विशेषज्ञों तक के लिए आसान बना देती है। शब्दार्थ वाले भाग में 'आई.पी.आर' संबंधी लेखों के कठिन शब्दों को आसान बना दिया है, जो इस किताब को और भी आकर्षक बना देता है।

५. 'अंडरस्टैन्डिंग द बायोलौजिकल डायवर्सिटी एक्ट २००२– ए डॉसियर'

संपादन – कांची कोहली

प्रकाशन – कल्पवृक्ष, ग्रेन, आइ.आइ.ई.डी., पुणे/दिल्ली, २००६

भारत का जैवविविधता कानून, जैवविविधता अधिनियम (बायोडायवर्सिटी एक्ट) के रूप में २००२ में लागू किया गया। हालांकि इस अधिनियम के कारण जैवविविधता संरक्षण व प्रबंधन पर काफी महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ सकते हैं, पर फिर भी इसके विषय में लोगों को बहुत कम जानकारी है। इस संकलन का उद्देश्य अधिनियम संबंधित अन्य नियमों तथा समझौतों के विषय में विस्तृत जानकारी को एक जगह पर उपलब्ध कराना है। इस अधिनियम के प्रावधानों की समझ के साथ-साथ इन प्रावधानों के दृष्टिकोण को समझना भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इस में अधिनियम की पृष्ठभूमि, इसके मुख्य भागों का परिचय, तथा नियम व समझौतों का संकलन किया गया है। इसमें अधिनियम पर प्रकट किए गए मतों तथा आलोचनाओं का भी संकलन करने का प्रयास किया गया है।

६. 'प्रोसेस डाक्यूमेंटेशन आफ द नैशनल बायोडायवर्सिटी स्ट्रैटिजी एक्शन प्लैन – इंडिया'

लेखक – सीमा भट्ट, कांची कोहली व आशीष कोठारी

प्रकाशन –कल्पवृक्ष, पुणे/दिल्ली, २००६

इस प्रकाशन में जैवविविधता के संरक्षण की राष्ट्रीय रणनीति व योजना (नैशनल बायोडायवर्सिटी स्ट्रैटिजी एक्शन प्लैन) बनाने की प्रक्रिया के अनुभव, कार्यप्रणालियों, तथा कुछ परिणामों का संकलन है। ग्यारह अध्यायों में इस प्रक्रिया की पृष्ठभूमि, इसके संस्थानात्मक ढांचों तथा योजना के विभिन्न स्तरों की जानकारी का संकलन है। प्रक्रिया के दौरान योजना बनाने व लोगों तक पहुंचाने के लिए उपयोग की गई नई प्रणालियों के विषय में भी बताया गया है। इस प्रारूप को नैशनल एक्शन प्लैन के रूप में प्रकाशित ना कर पाने और अंततः टेक्निकल रिपोर्ट के रूप में प्रकाशित करने की मज़बूरी के बारे में भी बताया गया है।

७. 'कम्यूनिटि कर्न्ज़वड एरियाज़ इन इंडिया' – एक प्रचार पत्र

कल्पवृक्ष ने भारत में सामुदायों द्वारा संरक्षित क्षेत्रों (CCA's) की स्थिति पर एक प्रचार पत्र प्रकाशित किया है। इस प्रचार पत्र को नीमा पाठक, तसनीम बालानीसोरवाला, आशीष कोठारी तथा ब्रायन.आर.बुशली के प्रयासों व बॉम्बे नैचुरल हिस्ट्री सोसाइटी द्वारा प्राप्त अनुदान की सहायता से तैयार किया गया है।

इस प्रचार पत्र की निःशुल्क प्रतियों व अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें नीमा पाठक, कल्पवृक्ष अथवा www.tilcepa.org देखें।

समुदाय व संरक्षण
अंक१, नं.१, जनवरी २००७
संपादक : एरिका तारापोरवाला
परामर्श : नीमा पाठक, आशीष कोठारी व पंकज सेख़सरिया
पुस्तक विश्लेषण : बीना थॉमस
फोटोग्रैफी : आशीष कोठारी
चित्रांकन : मधुवंती अनंतराजन
रूपरेखा व संकल्पना : मनीषा गुटमान
अनुवाद : मयंक त्रिवेदी, निधि अग्रवाल
विशेष सहयोग : चन्द्रिका लोडाया
निर्माण : कल्पवृक्ष, अपार्टमेन्ट ५ श्री दत्तकृपा, ६०८ डेक्कन जिमखाना, पुणे-४११००४
फोन : ९१-२०-२५६७५४५०,
फोन/फ़ैक्स : ९१-२०-२५६५४२३६
ईमेल : kvoutreach@gmail.com
वेबसाइट : www.kalpavriksh.org
आर्थिक सहयोग : मिज़रिओर, जर्मनी

समुदाय व संरक्षण
कल्पवृक्ष, अपार्टमेन्ट ५ श्री दत्तकृपा,
६०८ डेक्कन जिमखाना, पुणे-४११००४